9

धन्यवचन

(5:1-12)

पहाड़ी उपदेश (अध्याय 5-7) पहले उपदेश का काम करता है जो मत्ती ने सुसमाचार के अपने विवरण में शामिल किया। इसके साथ उसने यीशु को इस्राएल के उस अन्तिम गुरु के रूप में दिखाया, जिसकी बातें ईश्वरीय अधिकार और अनन्त परिणामों से भरी हुई हैं (7:21-29)। यह उपदेश जिसे उसने लिखा, नैतिक नियमों का संग्रह होने से कहीं बढ़कर है। इसमें उस श्रेष्ठ अधिकार की झलक है जो यीशु अर्थात मसीहा के पास उन सब के ऊपर है जो अनन्त जीवन पाएंगे।[1]

उपदेश का आरम्भ आवश्यक बातों के बजाय धन्य वचनों के साथ होता है। फिर यह उस ऊंचे मानक तक पहुंच जाता है जो शास्त्रियों और फरीसियों की धार्मिकता से ऊपर है, चाहे यह अनुग्रह के संदर्भ को कभी नहीं छोड़ता।[2] यह ऊंचा और पवित्र, परन्तु व्यावहारिक और किए जाने के योग्य भी है। इस उपदेश में संक्षिप्त की गई यीशु की अधिकारात्मक शिक्षाओं में ग्रेट कमीशन का पूर्वाभास है। प्रेरितों को अपने अन्तिम आदेश में यीशु ने उन्हें सब जातियों के लोगों को चेला बनाने और उन्हें वे सब बातें मानना सिखाने की आज्ञा दी जिसकी उसने उन्हें आज्ञा दी (28:18-20)।

पहाड़ी उपदेश की एक उपयुक्त रूपरेखा बनाना कठिन है। परन्तु यह स्पष्ट लगता है कि उपदेश का मुख्य भाग ''व्यवस्था'' और ''भविष्यवक्ताओं'' के हवालों से बनाया गया था (5:17; 7:12)। नीचे दी गई रूपरेखा उस का एक सामान्य चित्रण है जो यीशु ने अपनी प्रस्तुति में लिया।[3]

I. परिचय (5:3-16)
   - क. धन्यवचन (5:3-12)
   - ख. नमक और ज्योति (5:13-16)

II. मुख्य भाग (5:17-7:12)
   - क. पुरानी और नई धार्मिकता (5:17-48)
   - ख. बाहरी बनाम भीतरी धार्मिकता (6:1-18)
   - ग. परमेश्वर पर निर्भर होना (6:19-34)
   - घ. विभिन्न शिक्षाएं और सुनहरी नियम (7:1-12)

III. सारांश (7:13-27)
   - क. दो मार्ग (7:13, 14)
   - ख. झूठा और सच्चा (7:15-23)

ग. दो मकान बनाने वालों का दृष्टांत (7:24-27)

मत्ती में पहाड़ी उपदेश और लूका में मैदानी उपदेश के बीच तुलना की जा सकती है (लूका 6:17-49)। एक विचार यह है कि ये दोनों उपदेश वास्तव में एक ही उपदेश है और लूका ने केवल पूरे उपदेश के अपने संस्करण को सुरक्षित किया। सामग्री, भाषा और क्रम की समानताओं से ऐसा विचार बना है।[4] एक और विचार है कि वे अलग-अलग अवसरों पर दिए गए दो अलग अलग उपदेश हैं। उनमें कई अन्तर पाए जाते हैं, उदाहरणतया, उस स्थिति का विवरण जिसमें उपदेश दिए गए अलग लगता है: ''पहाड़'' (5:1) बनाम ''चौरस जगह'' (लूका 6:17)। इसके अलावा लूका वाले उपदेश में थोड़े धन्यवचन (और कुछ के शब्दों में अन्तर है) के अलावा इसमें हाय भी है (लूका 6:20-26) जो मत्ती के उपदेश में नहीं है।

दोनों उपदेशों की तुलना करने पर, जैक पी. लूईस ने ये संकेत बनाए हैं:

1. दोनों उपदेशों का आरम्भ धन्यवचनों के साथ (5:3-12; लूका 6:20-22) और अन्त मकान बनाने वालों के दृष्टांत के साथ होता है (7:24-27; लूका 6:47-49)।
2. मत्ती वाला उपदेश (107 आयतें) लूका वाले उपदेश (30 आयतें) से बहुत बड़ा है।
3. लूका वाले उपेदश की अधिकतर बातें मत्ती वाले उपदेश में मिलती हैं।
4. मत्ती वाले उपदेश की अधिकतर सामग्री लूका के अन्य भागों में बिखरी हुई हैं (अध्याय 11, 12, 13, 14, 16)।
5. मत्ती वाला उपदेश यीशु के बारहों को चुनने से पहले मिलता है (10:1-4), जबकि लूका वाला उपदेश उस घटना के बाद मिलता है (लूका 6:12-16)।[5]

यह काफी सम्भव लगता है कि मत्ती और लूका वाले उपदेश समय के अलग-अलग बिन्दुओं पर दिए गए। आखिर यीशु कई विभिन्न समूहों और श्रोताओं को सिखाता था और इसमें कोई संदेह नहीं है कि आमतौर पर वह अपनी बात को दोहराता था। फिर यह भी तो हो सकता है कि मत्ती और लूका एक ही उपदेश को बता रहे हों जिसमें मत्ती पहाड़ की पृष्ठभूमि पर ज़ोर दे रहा हो और लूका पहाड़ की चौरस जगह पर जोर दे रहा हो। इस पर कि क्या हुआ होगा, लगता है कि प्रत्येक लेखक सुसमाचार के अपने वृत्तांत में बातों को अपनी मर्जी से शामिल करता है। मत्ती ने उस शिक्षा को चुना जो विशेषकर उस व्यवस्था से और उन यहूदी श्रोताओं से सम्बन्धित थी, जिसमें से कुछ शिक्षा लूका में नहीं मिलती, जबकि लूका ने उस सामग्री को चुना जो विशेषकर अन्यजाति पाठकों के लिए उपयुक्त होनी थी।[6]

अपने पहाड़ी उपदेश में यीशु प्रामाणिक धार्मिकता और प्रसन्नता पर उपदेश देते हुए अपने उपदेश की भूमिका के रूप में आरम्भ करता है। भक्तिपूर्ण जीवन के लिए उसका ढंग आज की संस्कृति के विचार से पूरी तरह से उलट था। सच्ची धार्मिकता के लिए ये आवश्यकताएं यीशु की बातों में पाई जाती हैं जिन्हें आम तौर पर ''धन्य वचन'' कहा जाता है। यह शब्द लातीनी भाषा के शब्द *beatitudo* से लिया गया है जिसका यूनानी अनुवाद *makarios* है और इसका अर्थ ''प्रसन्न,'' ''खुशनसीब,'' या ''धन्य'' है।

यीशु ने धर्मी व्यक्ति के विवरण के लिए जिस से परमेश्वर प्रसन्न है इन बारह आयतों में नौ बार *मकेरियस* शब्द का इस्तेमाल किया। ''धन्य'' शब्द हमेशा बहुवचन में है, शायद प्रसन्नता की पूर्णता का सुझाव देते हुए जो परमेश्वर का भय मानने वालों को मिलेगा। जहां भी इस शब्द का इस्तेमाल हुआ है, वहां इसके बाद श्रेष्ठतम प्रतिज्ञा के साथ इसे दिखाने वाले व्यक्ति की विशेषता के साथ हुआ है।

जैसा कि इन धन्यवचनों में देखा जाता है, सच्ची खुशी धर्मी जीवन का प्रतिफल है। आत्मिक प्रसन्नता व्यक्ति के जीवन को सबसे निराशाजनक समयों में भी संतुष्टि से भर देगी (फिलिप्पियों 4:11, 12; 1 तीमुथियुस 6:6-11)।[7]

परिचय (5:1, 2)

[1]वह इस भीड़ को देखकर पहाड़ पर चढ़ गया और जब बैठ गया, तो उसके चेले उसके पास आए। [2]और वह अपना मुंह खोलकर उन्हें यह उपदेश देने लगा।

आयतें 1, 2. वह (यीशु) **... पहाड़ पर चढ़ गया।** ''पहाड़'' के लिए यूनानी शब्द को भूमि के ऊंचे स्थान के रूप में बेहतर ढंग से समझा जाता है (देखें 14:23; 15:29)। मत्ती में तीसरी परीक्षा (4:8), रूपांतर (17:1), ग्रेट कमीशन (28:16) सहित अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं को ऊंचे स्थानों से जोड़ा गया है।

क्या वचन मूसा, जिसने पुरानी वाचा स्थापित करने के लिए सीनै पहाड़ पर व्यवस्था प्राप्त की थी (निर्गमन 19-24), और यीशु, जिसने नई वाचा की तैयारी में पहाड़ पर एक नई व्यवस्था बताई के बीच सूक्ष्म समानता बनाता है। यह विचार चाहे स्पष्ट नहीं है पर यह इस तथ्य के साथ मेल खाता है कि यीशु ही वह ''भविष्यवक्ता'' है जिसकी बात मूसा ने की थी और उसका अधिकारात्मक वचन माना जाना चाहिए (व्यवस्थाविवरण 18:15, 18; प्रेरितों 3:22, 23; 7:37; देखें यूहन्ना 6:14; 7:40)।

यीशु के उपदेश के स्थान के लिए विभिन्न स्थानों का सुझाव दिया गया है। एक को इसकी दो चोटियों के कारण ''करने हित्तीम'' अर्थात ''हत्तीन के सींग'' कहा जाता है। यह स्थान तिबिरियास के निकट वास्तव में ठण्डे पड़ चुके ज्वालामुखी का स्थान है। फ्रैंक एल. कोक्स ने उस दृश्य का वर्णन इस प्रकार किया:

> समुद्र के तल से लगभग एक हज़ार फुट ऊपर उठकर, यह ''दो टीलों, या सींगों से जो कोई साठ फुट ऊंचे हैं और चोटी का ताज हैं से विशेष रूप में पास के प्रसिद्ध स्थानों से अलग हैं। इन सींगों के बीच घास की एक चौड़ी पट्टी, एक प्राकृतिक अखाड़ा है जिसमें बहुत बड़ी भीड़ एक आवाज सुनकर आसानी से इकट्ठी हो सकती है।''[8]

अधिक सम्भावना कफरनहूम और तबगा के बीच गलील की झील के उत्तर में एक पहाड़ी है। आज इसे धन्यवचनों की पहाड़ी कहा जाता है। पहाड़ के एक ओर इस उपदेश को, जो यीशु ने दिया था, स्मरण दिलाता हुआ, अब एक चैपल है।

चाहे पक्का किसी को नहीं मालूम कि उपदेश कहां दिया गया था, पर निश्चय ही यह

गलील की झील के निकट था। हमें चाहे ये कभी पता न चले कि यह उपदेश कहां दिया गया था, पर मत्ती ने इतना सुनिश्चित किया कि हमें यह पता चल सकता है कि क्या कहा गया था।

यीशु पहाड़ी पर **बैठ गया।** यह यहूदी रब्बियों का उपदेश देने का परम्परागत ढंग होगा (13:2; 23:2; 24:3; 26:55)। फिर **उसके चेले उसके पास आए।** यीशु के ''चेलों'' और **भीड़** के बीच सही-सही सम्बन्ध स्पष्ट नहीं बताया गया। इस स्थिति में भीड़ का होना यीशु के बात करने के *बाद* उनकी प्रतिक्रिया से ही पता चलता है (7:28, 29)।

लूका द्वारा दर्ज उपदेश पहाड़ पर बारह प्रेरितों के चुने जाने के बाद आता है (लूका 6:12-16)। वे यीशु के साथ पहाड़ से उतरकर ''चौरस जगह'' पर आए जहां ''उसके चेलों की बड़ी भीड़''[9] के साथ-साथ ''सारे यहूदिया और यरूशलेम और सूर और सैदा के समुद्र के किनारे से बहुतेरे लोग'' थे (लूका 6:17)।

सबके इकट्ठा हो जाने पर यीशु ने **अपना मुंह खोलकर उन्हें यह उपदेश देने लगा।** मत्ती द्वारा इस्तेमाल की गई भाषा एक गम्भीर और प्रतिष्ठित उपदेश का सुझाव देती है (देखें प्रेरितों 8:35; 10:34)। डग्लस आर. ए. हेयर ने टिप्पणी की है, ''वह एक राजा की तरह अपने सिंहासन पर बैठता है, उसके चेले शाही दरबार में प्रजा की तरह उसके पास आते हैं, और राजा अपना पहला सम्बोधन देता है, जिसमें वह विस्तार से बताता है कि उसके राज्य में लोगों का जीवन कैसा होगा।''[10]

यीशु के शब्दों को आम तौर पर नई वाचा का ''महाधिकार पत्र'' कहा जाता है।[11] ये सभी सिद्धांत नये नियम में कहीं और बताए गए हैं और वे हर पीढ़ी के मसीही लोगों के लिए हैं। उसके वचनों में यदि उन्हें माना जाए तो वह शिक्षा मिलती है जो अन्त में उस आनन्द तक ले जाती है जो इस जीवन में मिल सकता है।

मन के दीन (5:3)

[3]''धन्य हैं वे, जो मन के दीन हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।''

आयत 3. दीन के लिए यूनानी शब्द ऐसे व्यक्ति के लिए इस्तेमाल किया जाता है जो वंचित हो और दूसरों पर निर्भर हो। भजन संहिता की पूरी पुस्तक में दुष्ट धनवानों को धर्मी निर्धनों को कुचलते हुए दिखाया गया है; फिर भी इन प्रताड़ित लोगों को परमेश्वर द्वारा उनकी परेशानियों से निकाला जाता है।[12] मरियम के गीत में ऐसे ही विषय मिलते हैं, जिसमें कहा गया है कि परमेश्वर दीन और निर्धन लोगों पर दया करता है परन्तु धनवानों को खाली हाथ भेज देता है (लूका 1:46-55)। भविष्यवाणी को पूरा करते हुए यीशु ने कहा कि वह कंगालों को सुसमाचार सुनाने ''के लिए'' और ''बन्दियों को छुड़ाने'' के लिए आया (लूका 4:18; देखें यशायाह 61:1)। नये नियम के समयों में निर्धन लोगों को परमेश्वर पर निर्भर रहना पड़ता था और धर्मी निर्धनों को नबियों और अन्य लोगों द्वारा विशेष ढंग से परमेश्वर की विशेष चिन्ता का विषय माना जाता था।[13] इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए क्या हमें चकित नहीं होना चाहिए कि लूका वाला उपदेश ''दीन'' शब्द को बिना शर्त के रहने देता है (लूका 6:20)।

लूका के विपरीत मत्ती **मन के** शब्द को शामिल करता है। आत्मिक रूप में निर्धन होने का

अर्थ है कि व्यक्ति अपनी आत्मिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने संसाधनों के अपर्याप्त होने को मानता है। भजनकार ने लिखा कि ''टूटा मन परमेश्वर के योग्य बलिदान है; ... तू टूटे और पिसे हुए मन को तुच्छ नहीं जानता'' (भजन संहिता 51:17)। यीशु ने एक दृष्टांत बताया जो अपने आप में धर्मी फरीसी को एक दीन चुंगी लेने वाले से अलग करता था। फरीसी ने तो प्रार्थना में अपनी तारीफ़ की, परन्तु चुंगी लेने वाला पुकार उठा, ''हे परमेश्वर, मुझ पापी पर दया कर!'' (लूका 18:9-14)। प्रकाशितवाक्य 3:17 में यीशु ने लौदीकिया के मसीही लोगों को अपने आप में धर्मी होने और अपने आप में धनी होने वाला व्यवहार रखने के कारण डांटा। उसने कहा, ''तू कहता है कि मैं धनी हूं और धनवान हो गया हूं और मुझे किसी वस्तु की घटी नहीं है; और यह नहीं जानता कि तू अभागा और तुच्छ और कंगाल और अंधा और नंगा है।''

''मन के दीन'' होना घमण्डी और अपने आप में धर्मी होने के विपरीत है। यह विनम्र मन के होना है। यह धन्य वचनों की प्रभु की स्तुति में सबसे पहले आता है, क्योंकि बिना इसके कोई सूची के बाद के भाग में बताए गए व्यवहारों को स्वीकार नहीं कर सकता।

यीशु ने कहा कि ''मन के दीन'' लोगों को **स्वर्ग का राज्य** मिलेगा (3:2 पर टिप्पणियां देखें)। आत्मिक रूप में टूटे हुए मन लेकर परमेश्वर के पास आने वालों के मनों को मरम्मत किया जाएगा। यशायाह भविष्यवक्ता के द्वारा प्रभु ने कहा, ''मैं ऊंचे पर और पवित्र स्थान में निवास करता हूं, ... कि ['दीन'; NKJV] नम्र लोगों के सदय और खेदित लोगों के मन को हर्षित करूं'' (यशायाह 57:15)। परमेश्वर उन्हीं लोगों को ऊंचा करता है जो अपने जीवनों का नियन्त्रण उसके हाथ में दे देते हैं। याकूब ने लिखा, ''प्रभु के सामने दीन बनो, तो वह तुम्हें शिरोमणि बनाएगा'' (याकूब 4:10; देखें नीतिवचन 29:23)।

जो शोक करते हैं (5:4)

[4]''धन्य हैं वे, जो शोक करते हैं, क्योंकि वे शान्ति पाएंगे।''

आयत 4. शोक के लिए शब्द शायद यूनानी भाषा के सबसे मजबूत और कई सबसे कठोर शब्दों में से है जो शोक और दुख को व्यक्त करते हैं। आम तौर पर इसका इस्तेमाल किसी व्यक्ति द्वारा जिसका कोई प्रियजन खो गया हो, सहे गए दुख को व्यक्त करने के लिए किया जाता है (उत्पत्ति 23:2; 37:34, 35; 50:3 [LXX]; मरकुस 16:10)। यह ऐसा शोक है जो व्यक्ति को जकड़ लेता है और उसे जाने नहीं देता। ऐसा शोक आम तौर पर विलाप और रोने के द्वारा दिखाया जाता है। वास्तव में बाइबल में ''शोक'' और ''रोना'' शब्दों को कई बार इकट्ठे पाया जाता है। इस कारण यह हैरान करने वाली बात नहीं है कि लूका ने इसके साथ मेल खाता धन्य वचन में उन पर जो ''रोते'' हैं केवल आशीष की बात की (लूका 6:21)।

परन्तु इस पर संदेह है कि यीशु खोए हुए प्रियजनों पर शोक की बात कर रहा था या नहीं। स्पष्टतया इस धन्यवचन की पृष्ठभूमि यशायाह 61:2 है, जिसमें बताया गया था कि मसीहा ''सब विलाप करने वालों को शान्ति देगा।'' प्राचीन इस्राएल में शोक करने वालों को अपने लोगों के और परमेश्वर की ओर से उसके बाद होने वाले न्याय से परेशानी होती थी। वे प्रभु के चुने हुए लोगों पर अन्यजाति देशों के विजय पाने के विचार से ही व्याकुल हो जाते थे। ऐसा एक ऐसा

उदाहरण यिर्मयाह है, जो यरूशलेम के ऊपर रोया था (यिर्मयाह 9:1, 18; 13:17; 14:17)। विलापगीत में उसने यरूशलेम अर्थात परमेश्वर के चुने हुए नगर पर इसलिए अफ़सोस किया क्योंकि यह अपने पाप के दण्ड के रूप में नष्ट हो गया।

कई बार धार्मिकता से शोक मिलता है। ''धर्मी लूत'' को सदोमियों द्वारा ''अवैध कामों के द्वारा प्रतिदिन सताया जाता'' था। अनैतिक परिस्थितियां जिनमें वह रहता था उसे सताती थीं (2 पतरस 2:6-8)। यीशु ''दु:खी पुरुष था, रोग से उसकी जान पहिचान थी'' (यशायाह 53:3), विद्रोही नगर यरूशलेम को देख उस पर रोया था (लूका 19:41-44)। इसके अलावा उसने अपने साथी यहूदियों पर भी अफसोस किया था जिन्होंने यीशु को मसीहा के रूप में स्वीकार नहीं किया (रोमियों 9:1-3)।

धर्मी शोक करने वाले अपने स्वयं के पापों पर भी शोक करते हैं (भजन संहिता 51:1-4, 7-12)। यह तभी होता है, जब किसी को अहसास हो कि उसके पापों से परमेश्वर का दिल टूटा है और उसे मन फिराव की आवश्यकता है। पौलुस ने कहा कि ''परमेश्वर-भक्ति का शोक ऐसा पश्चात्ताप उत्पन्न करता है जिस का परिणाम उद्धार है'' (2 कुरिन्थियों 7:10; NIV)।

सच्चाई यह है कि जो लोग अपने स्वयं के पापों पर और दूसरों के पापों पर शोक करते हैं वे **शान्ति** पाएंगे। धर्मी शोक करने वालों को यह जानकर कि उनके व्यक्तिगत पापों को क्षमा कर दिया गया है और परमेश्वर उनके साथ है इस जीवन के दौरान उससे शान्ति मिलेगी, परमेश्वर से तसल्ली पाते हैं (11:28-30; 28:18-20; प्रेरितों 2:38; 1 यूहन्ना 1:7, 9)। अन्तिम शान्ति तो आने वाले जीवन में ही मिलेगी (लूका 16:25), जब ''सब प्रकार की शान्ति का परमेश्वर'' (2 कुरिन्थियों 1:3) ''उनकी आंखों से सब आंसू पोंछ डालेगा'' (प्रकाशितवाक्य 7:17; 21:4)।

नम्र (5:5)

[5]**''धन्य हैं वे, जो नम्र हैं, क्योंकि वे पृथ्वी के अधिकारी होंगे।''**

आयत 5. नम्र के लिए शब्द का अनुवाद ''दीन'' ही किया जाता है (KJV)। मूलतया इसका अर्थ, ''दयालु'' या ''कोमल'' है। परन्तु ''दीनता'' का अर्थ ''निर्बलता'' नहीं है। ''*Praus* में नम्रता है पर नम्रता के पीछे लोहे जैसी ताकत है। ... यह ताकत वश में है।''[14]

''दीन'' के लिए अंग्रेज़ी शब्द ''meek'' को कई बार सम्माननीय से कम अर्थात निर्बल, दुर्बल जन दिखाया जाता है, पर प्राचीन यूनानी भाषा में इस शब्द का अर्थ यह नहीं था। *Praus* शब्द यूनानी संस्कृति में बड़े नैतिक स्तर का प्रतीक था। विलियम बार्कले ने इस शब्द के साथ अनुवादक की दुविधा को ब्यान किया है। उसने कहा, ''अंग्रेज़ी का कोई भी शब्द इसका अनुवाद नहीं कर सकता, चाहे शायद *gentle* शब्द इसके बहुत पास से होकर जाता है।'' उसने इस वचन का यह विस्तृत पद्य दिया:

> उस व्यक्ति का आनन्द जो हमेशा सही समय पर क्रोधित होता है और गलत समय पर कभी क्रोधित नहीं होता, जिसके पास हर प्रतिभा और प्रभाव है और वेग वश में रहता है वह स्वयं परमेश्वर के वश में है, जिसमें अपनी स्वयं की अज्ञानता और अपनी स्वयं की निर्बलता को समझने के लिए दीनता है, ऐसा व्यक्ति मनुष्यों के बीच में राजा है![15]

तो फिर दीन व्यक्ति वह हुआ जो सही समय पर यही बात पर क्रोध करता है। यह ऐसा व्यक्ति है जो व्यक्तिगत अपमान के बजाय समाज में होने वाले अन्याय की चिन्ता अधिक करता है। ऐसे व्यक्ति को कमजोर या असुरक्षित मानने के बजाय हमें बार्कले की इस बात से सहमत होना पड़ेगा, ''यह इतिहास का तथ्य है कि अपने आपको नियन्त्रित रखने के दान, अपने आवेश वाले लोग और स्वाभाविक प्रवृति और आवेग को अनुशासन में रखने वाले लोग ही महान लोग हुए हैं।''[16]

Praus शब्द का इस्तेमाल मूसा और यीशु दोनों के विवरण के लिए हुआ है। गिनती 12:3 कहता है कि ''मूसा पृथ्वी भर के रहने वाले सब मनुष्यों से बहुत अधिक नम्र [*praus*; LXX] स्वभाव का था'' (KJV)। अपनी बात करते हुए यीशु ने कहा कि वह ''नम्र [*praus*] और मन में दीन'' (11:29; देखें 21:5) था। दोनों में से कोई भी कमजोर नहीं था। दोनों बड़े सामर्थी और योग्य थे, परन्तु वे परमेश्वर द्वारा दी गई अपनी भूमिकाओं को पूरा करने के लिए सेवक वाले व्यवहार और समझ से भरे हुए थे। ''यीशु ने जेलोतेसी मंशा के अनुसार बल से राजनैतिक राज्य स्थापित करके मसीहा की अपनी सेवकाई को पूरा नहीं किया बल्कि परमेश्वर और अपने साथी मनुष्यों की दीनता और बलिदानपूर्वक सेवा में रहकर किया।''[17]

यीशु के कहने का क्या अर्थ था जब उसने कहा कि नम्र लोग **पृथ्वी के अधिकारी होंगे**? इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास करने से पहले दो महत्वपूर्ण तथ्यों पर ध्यान देना आवश्यक है। पहली बात तो यह कि ''पृथ्वी'' शब्द का अनुवाद ''भूमि'' भी हो सकता है। दूसरा, यह धन्यवचन वास्तव में भजन संहिता 37:11 (36:11; LXX) का उद्धरण है: ''परन्तु नम्र लोग भूमि के अधिकारी होंगे और बड़ी शान्ति का आनन्द मनाएंगे'' (NIV)। भजन संहिता 37 दुष्टों और धर्मियों के बीच अन्तर करता है। यह इस प्रश्न का कि ''प्रतिज्ञा किए हुए देश (कनान) की आशीष का आनन्द कौन पाएगा?'' का उत्तर देता है। दुष्ट लोग जो अपनी दुष्ट चालें बनाते हैं उन्हें भूमि से काट दिया जाएगा, जबकि धर्मी और उनकी सन्तान जो प्रभु में भरोसा रखते हैं वे भूमि के अधिकारी होंगे (देखें यशायाह 61:7)।

यह प्रतिज्ञा हज़ार वर्ष के राज्य की शिक्षा का समर्थन नहीं करती जिसमें कहा जाता है कि यीशु जब वापस आएगा तो वह पृथ्वी पर अपना राज्य स्थापित करेगा। उसका राज्य उससे सुनने वाले कुछ लोगों के जीवन काल के दौरान ही आ गया (देखें मरकुस 9:1; यूहन्ना 18:36; प्रेरितों 1:6-8)। इस धन्यवचन को युगान्त विज्ञान (परलोक शास्त्र) के अर्थ में केवल ''नये आकाश'' और ''नई पृथ्वी'' के भाग के रूप में ही देखा जाए जिसके मसीही लोग समय के अन्त में वारिस होंगे (2 पतरस 3:13; प्रकाशितवाक्य 21:1)। यह उस सच्चाई की भी बात होनी चाहिए कि इस वर्तमान पृथ्वी पर, जो मसीह के लोग हैं उन में उन आशिषों का आनन्द पाने की अधिक क्षमता है जो वह उन्हें देता है (देखें 1 कुरिन्थियों 3:21-23)। रॉबर्ट एच. माउंस के शब्दों का इस्तेमाल करें तो, ''आक्रामक लोग अपनी हराम की कमाई का आनन्द नहीं ले पाते। केवल दीन लोगों में ही जीवन में उन सब बातों का आनन्द लेने की क्षमता होती है जो सच्ची और टिकाऊ संतुष्टि देती है।''[18] जेम्स मैक्गिल ने लिखा है:

पृथ्वी की सम्पत्ति सरकारी तौर पर चाहे जिसके नाम हो, यह संसार हमारे पिता का है

और दीन लोग उसकी सन्तान और उसके वारिस हैं। ...

दीन लोग इस पृथ्वी, इस जीवन का आनन्द सौ गुणा आशिषों के साथ अर्थात सचमुच में भरपूरी का जीवन और आने वाले संसार में अनन्त जीवन पाते हैं! (मरकुस 10:30)।[19]

जो धार्मिकता के भूखे और प्यासे हैं (5:6)

"'धन्य हैं वे, जो धार्मिकता के भूखे और प्यासे हैं, क्योंकि वे तृप्त किए जाएंगे।''

आयत 6. भूखे और प्यासे होना शायद मनुष्यों द्वारा चाहे जाने वाली सबसे मज़बूत और सबसे अधिक चाही जाने वाली शारीरिक इच्छा है। परन्तु आज के संसार में लोगों के लिए जिनके पास खाने और पीने की कोई कमी नहीं है तेज़ भूख और प्यास समझ से बाहर की बात है। यीशु को मालूम था कि भूखे होने का क्या अर्थ होता है क्योंकि उसने जंगल में चालीस दिन और चालीस रात उपवास किया था (4:2 पर टिप्पणियां देखें)। दिलचस्प बात है कि लूका के उपदेश में केवल इतना है, "धन्य हो तुम, जो अब भूखे हो; क्योंकि तृप्त किए जाओगे" (लूका 6:21)। निश्चय ही ऐसे लोग हैं जो परमेश्वर के प्रति अपने समर्पण के कारण जीवन की बुनियादी ज़रूरतों से वंचित रहते हैं (2 कुरिन्थियों 6:5; 11:27; प्रकाशितवाक्य 7:16)।

मत्ती में यीशु ने भूख और प्यासे होने के विचार को **धार्मिकता के लिए** वाक्यांश का इस्तेमाल करते हुए इसे आत्मिक इच्छा पर लागू किया। ऐसे रूपक की पृष्ठभूमि भजन संहिता की पुस्तक में मिलती है:

जैसे हरिणी नदी के जल के लिये हांफती है,
वैसे ही, हे परमेश्वर, मैं तेरे लिये हांफता हूं।
जीवते ईश्वर परमेश्वर का मैं प्यासा हूं,
मैं कब जाकर परमेश्वर को अपना मुंह दिखाऊंगा?
(भजन संहिता 42:1, 2)।

हे परमेश्वर, तू मेरा ईश्वर है, मैं तुझे यत्न से ढूंढूंगा;
सूखी और निर्जल ऊसर भूमि पर, मेरा मन तेरा प्यासा है,
मेरा शरीर तेरा अति अभिलाषी है (भजन संहिता 63:1)।

आत्मिक भूख और प्यास यशायाह में भी मिलती है:

अहो सब प्यासे लोगो, पानी के पास आओ; और जिनके पास रुपया न हो, तुम भी
आकर मोल लो और खाओ! दाखमधु और दूध बिन रुपए
और बिना दाम ही आकर ले लो। जो भोजन वस्तु नहीं है,
उसके लिये तुम क्यों रुपया लगाते हो, और,
जिस से पेट नहीं भरता उसके लिये क्यों परिश्रम करते हो?
मेरी ओर मन लगाकर सुनो, तब उत्तम वस्तुएं खाने पाओगे
और चिकनी चिकनी वस्तुएं खाकर सन्तुष्ट हो जाओगे (यशायाह 55:1, 2)।

यीशु ने पृथ्वी पर के अपने जीवन में इस आत्मिक भूख को दिखाया। जब शैतान ने उसे पत्थरों को रोटियां बनाने को कहकर परीक्षा दी, तो उसने यह कहते हुए जवाब दिया, ''मनुष्य केवल रोटी ही से नहीं, परन्तु हर एक वचन से जो परमेश्वर के मुख से निकलता है, जीवित रहेगा'' (4:4)। याकूब के कुएं पर जब चेले सुखार नामक नगर से भोजन लेकर लौटे तो वे चकित रह गए कि उसने खाने से इनकार कर दिया। उसने उससे कहा, ''मेरे पास खाने के लिए ऐसा भोजन है जिसे तुम नहीं जानते'' और ''मेरा भोजन यह है, कि अपने भेजने वाले की इच्छा के अनुसार चलूं और उसका काम पूरा करूं'' (यूहन्ना 4:32, 34)।

इस धन्यवचन की कम से कम कुछ भाग की व्याख्या उसकी परिभाषा देते हुए दी जानी चाहिए जो ''धार्मिकता'' से यीशु का अभिप्राय है। यीशु द्वारा इस्तेमाल करने को ''न्याय,'' नैतिक ईमानदारी,'' या ''परमेश्वर के साथ सही खड़ा होना'' के रूप में समझा जा सकता है। न्याय के सम्बन्ध में, डोनल्ड ए. हैग्नर ने सुझाव दिया है कि इस धन्यवचन ने दलितों और कुचले हुओं को प्रोत्साहन दिया है जो विशेष रूप से उस राज्य से जुड़े न्याय के लिए भूखे और प्यास थे जिसे परमेश्वर स्थापित कर रहा था।[20] लियोन मौरिस ने कहा कि धार्मिकता का सम्बन्ध नैतिक ईमानदारी से है। उसने लिखा, ''हर कोई कभी न कभी सही काम करता है, परन्तु यीशु ने अपने सुनने वालों को कभी-कभी काम करने का नहीं, बल्कि सही करने के लिए भावपूर्ण चिन्ता की ओर संकेत दिया।''[21] परमेश्वर के सब लोगों में कमियां और पाप हैं इसलिए उन्हें उसके साथ सही खड़े होने या धार्मिकता को पाने के लिए परमेश्वर के अनुग्रह पर निर्भर रहना आवश्यक है।

इस आयत की यूनानी संरचना यह सुझाव दे सकती है कि यीशु के चेलों को उस धार्मिकता की इच्छा करनी चाहिए जो अपने आप में बहुत विशाल है। परमेश्वर के साथ सही जीवन जीने के रूप में धार्मिकता के रूप में परिभाषित वैकल्पिक आत्मिक पूरक नहीं बल्कि आत्मिक आवश्यकता है। मसीह का कोई चेला अपने आपको इसकी खोज करने से दूर नहीं कर सकता। वह इसके हर भाग के लिए तड़पता है।[22]

आवेशपूर्ण ढंग से परमेश्वर की तलाश करने वालों से की गई प्रतिज्ञा यह है कि वे सन्तुष्ट किए जाएंगे। परमेश्वर ने उनके मन की हर इच्छा को पूरा करने का वचन दिया है। यहां इस्तेमाल की गई भाषा भजन संहिता 107:9 से मेल खाती है: ''क्योंकि वह अभिलाषी जीव को सन्तुष्ट करता है, और भूखे को उत्तम पदार्थों से तृप्त करता है'' (देखें यिर्मयाह 31:25; लूका 1:53)। परमेश्वर अपने लोगों की अभिलाषाओं को सन्तुष्ट कर सकता है, चाहे वे शारीरिक हों या आत्मिक। स्पष्टतया यह आत्मिक सन्तुष्टि वर्तमान युग में हो सकती है। यीशु ने कहा, ''जीवन की रोटी मैं हूं: जो मेरे पास आता है वह कभी भूखा न होगा, और जो मुझ पर विश्वास करता है वह कभी प्यासा न होगा'' (यूहन्ना 6:35)। इसके अलावा यह आत्मिक भरपूरी आने वाले युग में भी होगी और इस भरपूरी को बड़ी जेवनार और विवाह की दावत के रूप में दिखाया गया था (8:11, 12; 22:1-10; 25:10; प्रकाशितवाक्य 19:9)। स्वर्गीय नगर में प्यास जीवन के जल से बुझाई जाएगी, जो बिना दाम के मिलता है (प्रकाशितवाक्य 21:6; 22:17)।

दयावन्त लोग (5:7)

[7]''धन्य हैं वे, जो दयावन्त हैं, क्योंकि उन पर दया की जाएगी।''

आयत 7. दयावन्त यूनानी भाषा के शब्द से लिया गया शब्द है जिसका अनुवाद ''सहानुभूतिपूर्ण'' भी हो सकता है। अनुवाद हुआ सम्बन्धित शब्द ''दयालु'' सहानुभूति का संकेत देता है जो किसी दूसरे के प्रति महसूस की जाती और कामों में दिखाई जाती है। किसी दूसरे पर दया करने वाला व्यक्ति उसके प्रति परोपकारी होकर उसकी भलाई की कोशिश करता है। यह शब्द किसी के लिए केवल खेद करने से अलग; इसमें उस व्यक्ति की सहायता के लिए किए जाने वाले सकारात्मक कार्य आवश्यक हैं। यह ''सहानुभूति'' नहीं जो केवल दूसरे के प्रति तरसयोग भावना रखने की योग्यता है बल्कि ''समानुभूति'' है।

दयावन्त होने पर यीशु की शिक्षा नये नियम के संसार की विशेष जीवन शैली के विरुद्ध थी। रोमी लोग तरस को तुच्छ मानते थे और इसे आत्मा की बीमारी के रूप में देखते थे। वे दया को कमज़ोरी का प्रतीक मानते थे और सब मानवीय निर्बलताओं में से इसे सबसे तुच्छ मानते थे। वे मर्दानगी की महिमा करते और उनके लिए दया दिखाने का अर्थ पौरुष की कमी थी।[23]

यीशु के समय के यहूदी धार्मिक लोगों में आम तौर पर दया नहीं होती थी। वे अपने आप में धर्मी थे, गर्व से भरे और दोष लगाने वाले होते थे। उन्हें लगता था कि उनके पास हर धर्मशास्त्रीय प्रश्न का उत्तर है, परन्तु वे दुखी लोगों के लिए कोई दया नहीं रखते थे। दुखी लोगों को वे पाप के लिए परमेश्वर की ओर से दण्ड के रूप में देखते थे (देखें लूका 13:1-5; यूहन्ना 9:1, 13, 34)। पौलुस के गुरु गमलिएल को तालमुड में यह कहते हुए दिखाया गया है, ''जो [भी] दूसरों के प्रति दयालु होता है, उस पर स्वर्ग की ओर से दया दिखाई गई होती है, जबकि जो दूसरों पर दयालु नहीं होता, उस पर स्वर्ग की ओर से दया नहीं की गई होती।''[24] अपने कई समकालीनों के विपरीत दया के विषय में उसका विचार सही था।

दया परमेश्वर (निर्गमन 34:6; लूका 6:36) और मसीह (इब्रानियों 2:17) की महान विशेषताओं में से एक है। यीशु ने दया को ''व्यवस्था की गम्भीर बातों'' के साथ मिलाया (23:23; देखें 9:13; 12:7)। उसके धन्यवचन में नीतिवचन 14:21 में लिखी बात भी मिलती है: ''परन्तु जो दीन लोगों पर अनुग्रह करता, वह धन्य होता है'' (LXX)। दया का विषय मत्ती में समा जाता है, तब भी जब ''दया'' के लिए विशेष शब्दों का इस्तेमाल नहीं होता। रॉबर्ट एच. गुंडरी ने संकलित किया:

> यूसुफ मरियम को बदनाम न करने की इच्छा करके दया दिखाता है (1:19); एक पति के लिए अपनी पत्नी को तलाक न देकर दया दिखाना आवश्यक है (5:31-32 ...); कर्ज़दारों का दृष्टांत दया के एक कार्य के रूप में क्षमा का वर्णन करता है (18:23-35); मज़दूरों को पूरे दिन की मज़दूरी देना जिन्होंने केवल एक घण्टा काम किया भी ऐसा ही कार्य है (20:1-16); ''छोटे बालकों'' (अध्याय 18) अर्थात बच्चों, अन्धों और मन्दिर में लंगड़ों (21:14-16) और चुंगी लेने वालों और वेश्याओं (21:28-32) की ओर यीशु का ध्यान दया को दिखाता है; और दया के काम अन्तिम न्याय के समय भेड़ों को बकरियों से अलग करते हैं (25:31-46)।[25]

यीशु ने कहा था कि जो लोग दूसरों पर दया करते हैं उन पर **दया की जाएगी**। बाद में उसने बताया, ''और यदि तुम मनुष्यों के अपराध क्षमा न करोगे, तो तुम्हारा पिता भी तुम्हारे अपराध क्षमा न करेगा'' (6:15)। यदि हम दूसरों पर दया नहीं दिखाते हैं तो हम अपनी क्षमा के लिए दरवाजे बन्द करते हैं। याकूब ने लिखा, ''क्योंकि जिसने दया नहीं की, उसका न्याय बिना दया के होगा: दया न्याय पर जयवन्त होती है'' (याकूब 2:13)। हमारे पाप क्षमा करने की इच्छा उसके प्रेम और हमारे प्रति दया के कारण आती है। उसकी दया उसके अनुग्रह के कारण आती है और दोनों उसके प्रेम की अभिव्यक्तियां हैं। अपनी दया में परमेश्वर हमें सही दण्ड के योग्य होने पर दण्ड नहीं देता बल्कि अपने अनुग्रह में वह हमें क्षमा देता है जिसके हम योग्य नहीं हैं। ''दया का सम्बन्ध लक्षणों से है, जबकि अनुग्रह का सम्बन्ध कारण से है। दया दण्ड से राहत देती है जबकि अनुग्रह अपराध के लिए क्षमा देता है। दया पीड़ा को हटाती है जबकि अनुग्रह रोग का उपचार करता है।''[26] हैडन डब्लयू. रोबिन्सन ने जब यह लिखा तो वह ठीक ही कह रहा होगा कि ''अनुग्रह हमारे पापी होने के लिए परमेश्वर की प्रतिक्रिया है जबकि दया हमारी तरसयोग्य परिस्थिति पर उसकी प्रतिक्रिया है।''[27]

मन के शुद्ध (5:8)

[8]''धन्य हैं वे, जिन के मन शुद्ध हैं, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे।''

आयत 8. शुद्ध के लिए यूनानी शब्द नये नियम में सताइस बार आता है। NASB में इसका अनुवाद पवित्र या शुद्ध किया गया है। **मन** शब्द भीतरी मनुष्य की ओर संकेत करता है जिसमें उसकी भावनाएं, सोच और इच्छा है। यह धन्यवचन शास्त्रियों और फरीसियों द्वारा मानी जाने वाली बाहरी औपचारिक शुद्धियों के विपरीत है, मसीह के चेलों की भीतरी पवित्रता की बात करता है (देखें 15:1–11; 23:25–28)। शुद्ध मन हर अच्छे जीवन का स्रोत और आधार है। बिना इसके सही कार्य व्यर्थ संस्कारों में बदल जाते हैं (देखें 12:34; 15:19)। माइकल जे. विल्किंस ने इसकी अनिवार्यता को संक्षिप्त किया है:

> रब्बी लोग औपचारिक शुद्धिकरण को बनाए रखने के लिए नियमों का एक जटिल सिस्टम बनाते थे, जो बाद में मिशना का एक भाग बन गया जिसे *Tohoroth* (''शुद्धता'') बन गया। परन्तु वे सभी नियम, शुद्धता के सभी नियमों को नज़रअन्दाज़ कर सकते थे। मन शुद्ध होने से बाहरी शुद्धता मिलती है न कि बाहरी रूप से शुद्ध होने में मन शुद्ध होता है। ... शुद्ध मन उस व्यक्ति का चित्रण है जिसकी परमेश्वर के प्रति लगन ने जीवन के उसके हर क्षेत्र को प्रभावित किया।[28]

यीशु के धन्यवचन में आराधना का मार्ग मिलता है जिसका वर्णन भजन संहिता में है:

> यहोवा के पर्वत पर कौन चढ़ सकता है ?
> और उसके पवित्र स्थान में कौन खड़ा हो सकता है ?
> जिसके काम निर्दोष और हृदय शुद्ध है,
> जिसने अपने मन को व्यर्थ बात की ओर नहीं लगाया,

और न कपट से शपथ खाई है (भजन संहिता 24:3, 4)।

भजनकार ने प्रार्थना भी की:

> हे परमेश्वर, मेरे अन्दर शुद्ध मन उत्पन्न कर, और मेरे भीतर स्थिर आत्मा नये सिरे से उत्पन्न कर। मुझे अपने सामने से निकाल न दे, और अपने पवित्र आत्मा को मुझ से अलग न कर (भजन संहिता 51:10, 11)।

केवल वही जो ''मन के शुद्ध हैं'' परमेश्वर को **देखेंगे।** यहां क्रिया शब्द ''देखना'' आंखों से देखने से आगे बढ़ जाता है। इसका अर्थ परमेश्वर को अनुभव करना, आनन्द करना और जानना है। यह सच है कि कभी किसी ने परमेश्वर को नहीं देखा (निर्गमन 33:20; यूहन्ना 1:18; 1 तीमुथियुस 6:16)। परन्तु इसमें बोध है जिसमें मसीही लोग उसे शारीरिक रूप में देखे बिना भी विश्वास की आंखों से अपने सामने अनुभव कर सकते हैं (भजन संहिता 63:2; इब्रानियों 11:27)। तौभी एक दिन वह विश्वास दिखाई देगा (देखें 2 कुरिन्थियों 5:7) और मसीही लोग उसे ''आमने-सामने देखेंगे'' (1 कुरिन्थियों 13:12; देखें 1 यूहन्ना 3:2)। स्वर्गीय नगर में परमेश्वर अपने लोगों के बीच होगा (प्रकाशितवाक्य 21:3) और वे ''उसका मुंह देखेंगे'' (प्रकाशितवाक्य 22:4)।

मेल कराने वाले (5:9)

9''धन्य हैं वे, जो मेल कराने वाले हैं, क्योंकि वे परमेश्वर के पुत्र कहलाएंगे।''

आयत 9. मेल कराने वाले के पीछे यूनानी शब्द यहां पूरे नये नियम में यहीं मिलता है। लूईस ने कहा कि यह शब्द ''ऐसे व्यवहार का वर्णन है जो अफ़वाह फैलाने वाले, टांग अड़ाने वाले, शरारती, गप्पी और क्षति पहुंचाने वाले के विपरीत है।''[29]

नये नियम में ''मेल'' के लिए यूनानी शब्द शान्ति के नब्बे से अधिक रूपों का इस्तेमाल मिलता है और यह इसकी लगभग हर पुस्तक में है। ''मेल'' के लिए इब्रानी शब्द (*shalom*) अर्थात शालोम का अर्थ झगड़े की अनुपस्थिति से कहीं बढ़कर है। यानी इसमें दूसरों की सकारात्मक भलाई की इच्छा है। हेयर ने इस शब्द को इसके सांस्कृतिक संदर्भ में बड़े प्रभावी ढंग से लगाया है:

> यह ध्यान देने वाली बात है कि यह धन्यवचन पहले पैक्स रोमाना [रोमी शान्ति] के समय में बोला गया था। सैनिक श्रेष्ठता के बल से रोमियों ने एक दूसरे से मुकाबला करते रहने वाले राज्यों की छोटी-छोटी लड़ाइयां खत्म कर दी थीं, भूमध्य सागर को समुद्री डाकुओं से मुक्त करवा लिया था और देश में राहजनी को बहुत हद तक बन्द कर दिया था। साम्राज्य की समाओं को छोड़ और कहीं युद्ध नहीं मिलता था। परन्तु इब्रानी समझ *शालोम* में मेल जिसे सबकी भलाई के उद्देश्य से मिलकर सहयोग करना था, रोमी टुकड़ियों द्वारा कायम नहीं किया जा सकता था।[30]

पहली सदी के फलस्तीन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए हैग्नर ने सुझाव

दिया कि यह धन्यवचन उनके विरुद्ध था जो लोग जेलोतेशी थे। ये यहूदी क्रांतिकारी इल्फ़ा अर्थात अपने रोमी दमनकारियों को निकालकर इस्राएल के राज्य को फिर से स्थापित करना चाहते थे (देखें यूहन्ना 6:15)। उसने कहा, ''अपनी युद्धप्रियता से जेलोतसों को यह दिखाने की और उम्मीद थी कि वे 'परमेश्वर के पुत्र' हैं।'' परन्तु यीशु ने बताया कि परमेश्वर का राज्य इस प्रकार से नहीं आना था। इसके विपरीत उसका आना ईश्वरीय पहल से होना था और इसके लोग वे लोग होने थे जो मेल को बढ़ावा देते हैं।[31]

यीशु के अनुयायियों को मेल या शान्ति पर विचार करने या इसकी बातें करने से बहुत अधिक करने की आवश्यकता थी। प्रभु ने यह नहीं कहा, ''धन्य हैं वे जो शान्तिप्रिय हैं'' या ''धन्य हैं वे जो शान्ति की आशा रखे हैं।'' उसने अपने चेलों से मेल या शान्ति लाने को कहा जहां यह नहीं पाई जाती। यह धन्यवचन केवल झगड़े से बचने वालों के लिए प्रतिज्ञा नहीं है। इसके बजाय सच्ची खुशी उन्हीं को मिलती है, जो अपनी परेशानियों का सामना करते हुए उन पर विजय पाते हैं। बार्कले ने मेल कराने के इस भाग का अवलोकन किया:

> जिस बात की यह धन्यवचन मांग करता है वह चीज़ों को इस कारण मान लेना नहीं है क्योंकि हम उन पर कोई बात करने से परेशानी में पड़ने से बचना चाहते हैं बल्कि यह चीज़ों का सक्रिय रूप में सामना करना और जब शान्ति का मार्ग संघर्ष में से होकर जाता हो तब भी शान्ति *रखना* आवश्यक है।[32]

यीशु ने कहा कि जो लोग मेल को बढ़ावा देते हैं वे परमेश्वर के पुत्र कहलाएंगे। परमेश्वर मनुष्यजाति को अपनी संगति में वापस लाने के लिए अपने इकलौते पुत्र का बलिदान करके, सबसे बड़ा मेल कराने वाला है (रोमियों 5:1-11; इफिसियों 2:11-22)। वह ''शान्ति का परमेश्वर'' (फिलिप्पियों 4:9; 1 थिस्सलुनीकियों 5:23) है। मेल कराने वाले यानी शान्ति कराने वाले लोग ''परमेश्वर के पुत्र कहलाएंगे'' क्योंकि उनका स्वभाव उसी के जैसा है। चाहे इस बात का अर्थ है कि जिसमें परमेश्वर वफ़ादार विश्वासियों को वर्तमान में अपने ''पुत्र'' कहता है (रोमियों 8:14; गलातियों 3:26, 27), परन्तु वह मेल कराने वालों को अन्तिम न्याय के समय में भी अपनी सन्तान मानेगा।

सताए जाने वाले (5:10-12)

10 **''धन्य हैं वे, जो धार्मिकता के कारण सताए जाते हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।**

11 **धन्य हो तुम, जब मनुष्य मेरे कारण तुम्हारी निन्दा करें, और सताएं और झूठ बोल बोलकर तुम्हारे विरोध में सब प्रकार की बुरी बातें कहें।** 12 **तब आनन्दित और मगन होना, क्योंकि तुम्हारे लिए स्वर्ग में बड़ा फल है। इसलिए कि उन्होंने उन भविष्यवक्ताओं को जो तुम से पहिले थे इसी रीति से सताया था।''**

5:3-12 में ''धन्य'' शब्द चाहे नौ बार मिलता है और तकनीकी रूप में धन्यवचन नौ ही हैं। पर आठवें (5:10) और नौवें (5:11, 12) को आम तौर पर इकट्ठे कर लिया जाता है क्योंकि

दोनों सताव की बात कर रहे हैं। पहले आठ धन्यवचन अन्य पुरुष (''वे'') में हैं परन्तु नौवां धन्यवचन मध्यम पुरुष (''तुम'') में बदल जाता है। शायद यीशु ने उन में से आठ धन्यवचन आम तौर पर भीड़ के लिए कहे और फिर नौवां धन्यवचन अपने चेलों के लिए।[33] नमक और ज्योति के रूप में अपने चेलों की भूमिका की चर्चा करते हुए उसने मध्यम पुरुष में बात करना जारी रखा (5:13-16)।

आयत 10. इन अन्तिम आयतों में, ''धन्यवचनों के विरोधाभासों का चरम आ जाता है।''[34] यीशु ने कहा, ''**धन्य हैं वे, जो धार्मिकता के कारण सताए जाते हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।**'' ''सताए'' के लिए यूनानी शब्द का अर्थ है ''पीछा किया जाना, निकाले जाना या खदेड़े जाना।'' ये शब्द शारीरिक प्रताड़ना, परेशान करना और सताए जाने के अन्य रूपों का सुझाव देता है।

इस धन्यवचन की प्रतिज्ञा, **स्वर्ग का राज्य** सामान्य अर्थ में सताए जाने वालों के लिए नहीं है बल्कि ''धार्मिकता के लिए'' सताए जाने वालों के लिए ही है। पतरस ने बुराई करने पर सताए जाने को मसीह के लिए सताए जाने से बिल्कुल अलग किया:

> फिर यदि मसीह के नाम के लिए तुम्हारी निन्दा की जाती है, तो धन्य हो; क्योंकि महिमा का आत्मा, जो परमेश्वर का आत्मा है, तुम पर छाया करता है। तुम में से कोई व्यक्ति हत्यारा या चोर, या कुकर्मी होने, या पराए काम में हाथ डालने के कारण दुख न पाए। पर यदि मसीही होने के कारण दुख पाए, तो लज्जित न हो, पर इस बात के लिए परमेश्वर की महिमा करे (1 पतरस 4:14-16; देखें 3:14)।

आयत 11. यीशु ने सताए जाने के विषय पर बोलना जारी रखा: ''**धन्य हो तुम, जब मनुष्य मेरे कारण तुम्हारी निन्दा करें, और सताएं और झूठ बोल बोलकर तुम्हारे विरोध में सब प्रकार की बुरी बातें कहें।**'' सताव में अपमान और बदनामी शामिल है। लूका 6:22 में और विवरण है: ''धन्य हो तुम जब ... लोग तुम से बैर करेंगे, और तुम्हें निकाल देंगे, और तुम्हारी निन्दा करेंगे, और तुम्हारा नाम बुरा जानकर काट देंगे।'' ''निन्दा'' के लिए इस्तेमाल हुए यूनानी शब्द में घोर अपमान शामिल है और इसका अनुवाद ''तिरस्कार'' या ''भर्तस्ना'' भी हो सकता है। मूल में इसका अर्थ ''किसी के दांतों में अपमान या निन्दा फैंकना'' है।

''मेरे कारण'' का अर्थ है ''मसीह की खातिर।'' यह वाक्यांश ''धर्म के कारण'' के समान ही है (5:10)। यीशु ने वचन दिया कि उसके चेलों के साथ भी वैसा ही दुर्व्यव्यवहार किया जाएगा जैसा उसके साथ किया गया था। उसने कहा, ''चेला अपने गुरु से बड़ा नहीं; और न दास अपने स्वामी से'' (10:24)। उसने अपने चेलों को चेतावनी दी कि एक से दूसरे नगर में उनका पीछा किया जाएगा, गिरफ़्तार किया जाएगा, मुकदमा चलाया जाएगा, कोड़े मारे जाएंगे और यहां तक कि मार भी डाला जाएगा (10:16-23)।

आयत 12. ऐसे सताव के बीच यीशु ने अपने चेलों से कहा, ''**आनन्दित और मगन होना।**'' लूका 6:23 कहता है, ''उस दिन आनन्दित होकर उछलना।'' सताव के बीच आनन्द करने की बात आज के चेलों को चाहे बेतुकी और आदर्शवादी लगे, पर आरम्भिक कलीसिया के लिए ऐसा कुछ नहीं था। कोड़े मारे जाने के बाद प्रेरित ''इस बात से आनन्दित होकर महासभा

के सामने से चले गए, कि हम उसके नाम के लिए निरादर होने के योग्य तो ठहरे'' (प्रेरितों 5:40, 41)।

सताव के बीच भी यीशु की प्रतिज्ञा के कारण आनन्द किया जाना चाहिए कि ''**तुम्हारे लिए स्वर्ग में बड़ा फल है।**'' नीचे के कष्ट ऊपर की आशिषों की तुलना में बहुत कम और थोड़ी देर के लिए हैं (2 कुरिन्थियों 4:17)।

धन्य वचनों का आरम्भ और अन्त ''स्वर्ग का राज्य'' के हवालों के साथ होता है। पहले और अन्तिम धन्यवचनों में स्वर्ग के हवाले हैं: ''स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है'' (5:3, 10) और ''तुम्हारे लिए स्वर्ग में बड़ा फल है'' (5:12)।

जब यीशु के चेले वफ़ादारी से धार्मिकता के लिए सताव सहते हैं, तो वे पुराने नियम के नबियों के साथ अपना स्थान बना लेते हैं: ''**इसलिए कि उन्होंने उन भविष्यवक्ताओं को जो तुम से पहिले थे इसी रीति से सताया था।**'' भविष्यवक्ताओं ने उन लोगों द्वारा जिन्हें उन्होंने समझाना चाहा था, ठुकराए जाने और प्रताड़ित होने के बावजूद परमेश्वर की सेवा की और उसे महिमा दी (23:31, 34, 37; प्रेरितों 7:52; इब्रानियों 11:32-38; याकूब 5:10, 11)। इस प्रकार का सताव सहने वाले सब लोगों को परमेश्वर द्वारा प्रतिफल दिया जाएगा।

❖❖❖❖❖ **सबक** ❖❖❖❖❖

प्रसन्नता का पीछा (5:1-12)

प्रसन्नता हमें कैसे मिलती है? क्या हमें प्रसन्न करना किसी दूसरे की जिम्मेदारी है? क्या प्रसन्नता अधिक कमाई वाली नौकरी पाने से, हमारी इच्छाओं से मेल खाता घर पाने से, किसी प्रिय समाज में रहने से या लाभदायक वित्तीय निवेश करने से मिलती है? नहीं, यह इनमें से किसी से नहीं मिलती, वास्तव में प्रसन्नता की खोज अपने आप में सबसे बड़ा दुख का कारण है (1 तीमुथियुस 6:9, 10)। प्रसन्नता अवश्य ही हमारे अन्दर से आती है। सचमुच में प्रसन्न व्यक्ति वह है जो सन्तुलित और नियन्त्रित जीवन जीता है। अन्य शब्दों में सच्ची प्रसन्नता परमेश्वर के साथ और अपने आस पास के लागों के साथ सही सम्बन्ध होने से आती है।

वह होना जो यीशु ने बताया (5:1-12)

मत्ती के विवरण में दिए पहले चार धन्यवचन दिल और मन के भीतरी नियमों से सम्बन्धित हैं। अन्तिम चार उस ढंग को दिखाते हैं जिससे हमें दूसरे लोगों के साथ जुड़ना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, जब हम ''मन के दीन'' (5:3) होते हैं तो हम अपने लिए परमेश्वर की दया को समझ जाएंगे। जिस कारण बदले में हमें दूसरों के प्रति अधिक दयालु होना चाहिए (5:7)। अपने पापों को पहचानने और उनके लिए सचमुच में दुख होने पर (5:4) हमें अधिक पवित्र जीवन जीने की इच्छा मिलनी चाहिए (5:8)। मन के नम्र होना (5:5) हमारी उन बातों की खोज का कारण होगा जो मेल की ओर ले जाती हैं (5:9)। जब हम सचमुच में ''धार्मिकता के भूखे और प्यासे'' (5:6) होंगे तो हम उस कीमत को समझ जाएंगे जो यीशु के चेलों के रूप में रहने के लिए अदा करनी आवश्यक है (5:10-12)। पौलुस ने लिखा कि ''जितने मसीह

यीशु में भक्ति के साथ जीवन बिताना चाहते हैं वे सब सताए जाएंगे'' (2 तीमुथियुस 3:12)।

डी. मार्टिन लॉयड जोन्स ने धन्यवचनों की चार प्रमुख सच्चाइयों की ओर ध्यान दिलाया।[35] (1) वे हर मसीही के जीवन के ढंग का विवरण हैं कि उसका जीवन कैसा होना चाहिए। (2) वे इसलिए दिए गए हैं कि हर मसीही उन्हें पूरी तरह से आत्मसात कर लें। (3) वे, वे नहीं हैं जिन्हें हम स्वाभाविक प्रवृत्तियां कहेंगे, बल्कि वे हमें हमारे स्वाभाविक व्यवहार के विपरीत करने की चुनौती देते हैं। (4) वे हमें संसार और इसकी अभिलाषाओं से ऊपर रहने और अपने आस पास के लोगों से सचमुच में अलग और निराले ढंग से रहने को कहते हैं।

आज बहुत से मसीही लोग, यहां तक कि प्रभु की कलीसिया की कई मण्डलियां अपने आस पास के संसार के माहौल के अनुसार ढलने और उसे अपनाने के लिए समय और पैसा बर्बाद करने की कोशिश करते हैं। यह करने के बजाय हमें अलग खड़े होने का साहस करना चाहिए (देखें याकूब 4:4; 1 यूहन्ना 2:15-17)। हम ने सांसर को कलीसिया पर आक्रमण करने की अनुमति दे दी है और कलीसिया बहुत करके संसार के जैसी ही बन गई है। यीशु ने कहा कि उसके चेले चाहे इस संसार में होंगे पर उन्हें ''संसार के'' नहीं होना चाहिए (यूहन्ना 17:15-17)।

एक मसीही का जीवन (5:1-12)

नीचे दिए गए वाक्यों का इस्तेमाल प्रमुख प्वांयटों के रूप में करते हुए धन्य वचनों पर एक सबक बनाया जा सकता है:

1. अपने अपर्याप्त साधनों को पहचानें।
2. समझ लें कि हमारे पापों से परमेश्वर का दिल टूटता है।
3. पूरी तरह से परमेश्वर को समर्पण कर दें।
4. उत्सुक्ता से आत्मिक भोज की लालसा करें।
5. दयालु होना याद रखें।
6. मन के शुद्ध बने रहें।
7. मेल कराने वाले होने का निश्चय करें।
8. सताव आने पर आनन्दित हों।

शोक करने वालों को तसल्ली (5:4)

जब हमारे पापों के बोझ हमें सताते और हमारे लिए उठाने बड़े भारी हो जाते हैं (देखें भजन संहिता 38:4; 51:3) तो यीशु हम से उस बोझ को हटा सकता है (मत्ती 11:28-30)। हमारे उस उद्धार को ग्रहण कर लेने पर जिसे वह आज्ञाकारी विश्वास के द्वारा देता है अपने अन्दर हमें आत्मिक शान्ति मिलने लगती है। यीशु ने कहा कि हम ''शान्ति पाएंगे।'' पौलुस ने लिखा, ''अत: अब जो मसीह यीशु में हैं, उन पर दण्ड की आज्ञा नहीं'' (रोमियों 8:1)। विश्वास, मन फिराव और बपतिस्मे में व्यक्ति यह समझ जाने पर कि उसके पाप यीशु के लहू में धो दिए गए हैं, बड़ी राहत और सुकून पाता है। हम इस आशीष का आनन्द लेते रह सकते हैं यदि हम उसके वचन की रोशनी में चलते रहें और अपने पापों को उसके सामने मानते रहें (1 यूहन्ना 1:7-10)।

धर्म के भूखे और प्यासे होना (5:6)

इस वचन में ''धर्म'' शब्द का इस्तेमाल उस दान के वर्णन के लिए किया गया है जो उद्धार पाए हुए लोगों पर अनुग्रह के द्वारा परमेश्वर देता है (2 कुरिन्थियों 5:21)। जब हम विश्वास से, बपतिस्मा पाने की मसीह की आज्ञा को मानते हैं, तो परमेश्वर हमें ''धर्मी'' घोषित कर देता है (रोमियों 3:21–26; 6:3, 4, 17, 18)। परमेश्वर मसीह के बलिदान को हमारे स्वीकार करने के आधार पर हमारे लिए दो बातें करता है: वह हमारे क्षमा किए गए पापों को हमारे विरुद्ध लगाने से परहेज करता है और वह हमें ''बिना कर्मों के धर्मी ठहराता है'' (रोमियों 4:5–9)।

''धर्मी'' का अर्थ परमेश्वर की आज्ञाओं को मानने से भी सम्बन्धित है (5:10; 6:1; लूका 1:6; 2 तीमुथियुस 3:16; इब्रानियों 12:11)। आत्मिक जीवन की पहचान ''सही होने'' की तड़प है। यदि हम मसीही होने के नाते अपने में यह आत्मिक लालसा नहीं रखते तो हम वह नहीं बन पाएंगे, जो परमेश्वर हमें बनाना चाहता है। ''यदि धन्य होना केवल उन्हीं के लिए है जो भलाई पा लेते हैं, तो कोई भी धन्य नहीं होगा।'' यह उसे मिलती है जो गलतियों और नाकामियों के बावजूद भलाई के लिए आवेशपूर्ण प्रेम के साथ बना रहता है।''[36]

यदि हम परमेश्वर के वचन के भरे होना चाहते हैं तो हमें इसकी भूख और प्यास वैसे होनी आवश्यक है, जैसे बहुत समय से हमें भोजन और जल न मिला हो। शरीर खत्म हो जाता है पर आत्मा अमर रहती है। इसलिए आत्मिक भूख का मिटना पेट की भूख के मिटने से अधिक महत्वपूर्ण है।

परमेश्वर को देखना (5:8)

इस पर कोई झगड़ा नहीं है कि हम वही देखते हैं जो हम देखना चाहते हैं। जब एक विश्वासी आकाश को देखता है तो उसे परमेश्वर की हस्तकला का काम दिखाई देता है (भजन संहिता 19:1)। एक नास्तिक केवल असीमित अन्तरिक्ष और कालेपन को ही देखता है। फूलों का प्रेमी उनकी सुन्दरता को देखकर उनकी सुगन्ध ले सकता है पर प्रशिक्षित वनस्पति-शास्त्री इसे इसके जीव विज्ञान के नाम से ही बुलाएगा और इसके गुप्त गुणों पर चर्चा करेगा। कला के नमूने को देखकर कला का आलोचक सर्वोत्तम रचना को भी देखेगा, जबकि अनाड़ी निरीक्षक को केवल रंग और आकार ही दिखाई देंगे। अन्तिम आनन्द परमेश्वर को वैसे ही देखने पर मिलेगा जैसे वह अनन्तकाल में है, पर जीवन की आसान बातों में उसे देखना हमारे सफ़र को और उपयोगी बना देगा। हम अपने आस पास उसकी हस्तकला को देख सकते हैं (रोमियों 1:20) और अपने जीवनों में उसके उपाय के काम करने के लिए (रोमियों 8:28)।

सचमुच में मेल कराने वाले (5:9)

हम में या तो मेल कराने वाले या गड़बड़ कराने वाले होने की योग्यता है। सब लोग जो कहते हैं कि शान्ति या मेल चाहते हैं वास्तव में वे मेल कराने वाले नहीं हो सकते। बहुत से लोग जो शान्ति चाहने का दावा करते हैं वास्तव में वे युद्ध करवाने वाले होते हैं। यीशु निष्क्रिय आलस के बजाय मेल करने में सक्रिय भागीदारी की बात कर रहा था। वह हमें मेल कराने वाले होने के लिए कहता है न कि शान्त करने वाले।

हमारे आज के संसार के लिए शायद इस धन्यवचन से उपयुक्त संदेश कभी नहीं था कि ''धन्य हैं वे, जो मेल कराने वाले हैं'' (5:9)। लोगों में युद्ध और यह सारा दुख, बेचैनी और अनबन का भय क्यों बना रहता है? इस धन्यवचन के अनुसार, इस प्रश्न का उत्तर केवल पाप है। हमारी सब परेशानियों का कारण मनुष्य की लालसा, लोभ और स्वार्थी होना है। यही हर प्रकार की परेशानी और अनबन का कारण है, चाहे वह लोगों के बीच में हो, किसी देश के अन्दर गुटों के बीच या देशों के बीच। हम आधुनिक संसार की समस्या को समझ ही नहीं सकते जब तक हम मनुष्य और पाप के सम्बन्ध में नये नियम की शिक्षा को नहीं मानते।

परमेश्वर के बालक से ''उन बातों में लगे रहने को जिनसे मेल मिलाप हो'' कहा जाता है (रोमियों 14:19)। यदि सम्भव हो तो विश्वासियों को ''सब मनुष्यों के साथ'' मेल मिलाप रखना चाहिए (रोमियों 12:18)। आत्मा के द्वारा चलाए जाने वाले व्यक्ति के जीवन के पल की एक बात ''मेल'' है (गलातियों 5:22)। पौलुस ने इफिसुस की कलीसिया से ''मेल के बन्ध में आत्मा की एकता रखने का यत्न'' करने का आग्रह किया (इफिसियों 4:3)।

यीशु की बात को मन की शान्ति और परमेश्वर के साथ मेल होने के लिए भी लागू किया जा सकता है। यशायाह ने कहा, ''दुष्टों के लिये कुछ शान्ति नहीं'' (यशायाह 48:22)। अपने मन में शान्ति की सम्भावना तब तक नहीं है जब तक हमारे पाप क्षमा नहीं होते और अपने सृष्टिकर्त्ता के साथ हमारी सुलह नहीं हो जाती। सुसमाचार की आज्ञा मानने के बाद हम प्रार्थना में परमेश्वर के पास अपनी सारी चिन्ताएं ले जाने पर ''परमेश्वर की शान्ति की, जो सारी समझ से परे है'' पा सकते हैं (फिलिप्पियों 4:6, 7)।

सताव के रूप (5:10-12)

पौलुस ने कहा कि ''जितने मसीह यीशु में भक्ति के साथ जीवन बिताना चाहते हैं वे सब सताए जाएंगे'' (2 तीमुथियुस 3:12; देखें यूहन्ना 15:20; 1 थिस्सलुनीकियों 3:3, 4)। मत्ती 5:10, 11 में यीशु ने मसीही लोगों के विरुद्ध हो सकने वाले कई प्रकार के सताव की बात की।

मसीही लोगों को शारीरिक रूप में सताया जा सकता है। बहुत से आरम्भिक मसीही लोगों का क्रूस पर चढ़ा दिया गया, खूंटे से बांधकर मरवा दिया गया, बोर हुई जनता के मनोरंजन के लिए जंगली जानवरों द्वारा निगल लिए जाने के रोमी रंगभूमियों में डाल दिया गया, या रात को रंगभूमि में रोशनी के लिए मानवीय मशालों के रूप में जीवित जला दिया गया।[37]

मसीही लोगों का ''अपमान'' किया जा सकता है। यदि हम धर्मी जीवन जीते हैं तो हम उन लोगों के हाथों जो सांसारिक तरीके से रहते हैं अपमानित होकर सताए जा सकते हैं (यूहन्ना 15:18–20)।

मसीही लोगों की बदनामी की जा सकती है। सामने बोलने के बजाय कई बार बुराई करने वाले लोग मसीही लोगों की पीठ पीछे बोलते हैं। लोगों द्वारा आक्रमण किए जाने पर दुखी होने की तरह वे कम से कम हमें उनके विरुद्ध सफ़ाई देने का अवसर देते हैं। जब आक्रमण ''पीठ में छुरा'' हो तो वे हमारी जानकारी के बिना हमारी प्रतिष्ठा को गम्भीर हानि पहुंचा सकते हैं।

हमें ऐसे सताव पर क्या प्रतिक्रिया देनी चाहिए? यीशु ने कहा, ''आनन्दित और मगन होना'' (5:12)। उसके कहने का अर्थ यह नहीं था कि हम ''इसे खुशी खुशी सह लें।'' उसे

हमें आनन्द करने का कारण याद दिलाया कि इसका कारण यह है कि ''स्वर्ग में हमारे लिए बड़ा प्रतिफल था।'' हमारा अन्तिम प्रतिफल स्वर्ग में हमारा अनन्त घर ही होगा, परन्तु हमारा सारा प्रतिफल भविष्य ही नहीं है (मरकुस 10:29, 30)। हमें मसीह में बहुतायत का जीवन अब और हर प्रकार की आत्मिक आशिषें मिलती हैं (यूहन्ना 10:10; इफिसियों 1:3)।

सताव (5:10-12)

कई बार अच्छी समझ की अपनी कमी, मूर्खता या गड़बड़ी के कारण हम दुख उठा सकते हैं। कइयों का मानना है कि उन्हें अपने विश्वासों के कारण सताया जा रहा है, जबकि वे केवल दुष्कर्मों के सांसारिक परिणामों को सह रहे होते हैं (देखें 1 पतरस 4:14-16)। ऐसे लोग इस प्रकार काम करते हैं जैसे वे शहीद हों। इस प्रकार का ''प्रताड़ित'' होने का व्यवहार अपने आप में कुछ लोगों के लिए सताव को बुलावा देता है। रोबिन्सन ने ऐसे लोगों के लिए कहा है, ''वे बड़े जोशीले लोग हैं, उस धर्म के नाम की लालसा रखने वाले जो शायद कभी कमीज की जेब के आगे नहीं बढ़ते। उन्हें लग सकता है कि उन्होंने क्रूस की ठोकर को अपनाया है, पर वे केवल ठोकर हैं।''[38]

हमें ठोकर देने वाले व्यवहार, ठोकर दिलाने वाले वस्त्र या ठोकर दिलाने वाली बातचीत न रखने के प्रति सावधान रहना चाहिए। यदि हम अपने आपको इस प्रकार से चलाते हैं और दूसरों को ठोकर दिलाते हैं जिससे वे हमें ठुकराएं या हमें नीचा समझें, तो वे हमें सता नहीं रहे हैं। इसके विपरीत हम अपने ही अनुचित व्यवहार के कारण दुख पा रहे हैं। यह वह परिस्थिति नहीं है जो यीशु ने कहा कि हमारे लिए आशीष होगा।

टिप्पणियां

[1]आर. टी. फ्रांस, द *गॉस्पल अक्कॉर्डिंग टू मैथ्यू,* द टिंडेल न्यू टैस्टामैंट कमैंट्रीज़ (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1985), 106-7. [2]लियोन मौरिस, द *गॉस्पल अक्कॉर्डिंग टू मैथ्यू,* पिल्लर कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1992), 95. [3]डोनल्ड ए. हैग्नर, *मैथ्यू 1-13,* वर्ड बिब्लिकल कमैंट्री, अंक 33ए (डलास: वर्ड बुक्स, 1993), 84. [4]दोनों प्रवचनों के ऐसे ही क्रम के लिए *डिक्शनरी ऑफ़ जीज़स एंड द गॉस्पल्स,* संपा. जोएल बी. ग्रीन एंड स्कॉट मैकनाइट (डाउनर्स ग्रोव, इलिनोइस: इंटरवर्सिटी प्रैस, 1992), 736. में जी. एन. सेनटन, ''सरमन ऑन द माउंट/प्लेन'' में चार्ट देखें। [5]जैक पी. लूईस, द *गॉस्पल अक्कॉर्डिंग टू मैथ्यू,* पार्ट 1, द वर्ड लिविंग कमैंट्री (आस्टिन, टैक्सस: स्वीट पब्लिशिंग कं., 1976), 78. [6]मत्ती 5:14, 17, 19-24, 27-31, 33-38, 41, 43, 45, 47; 6:1-8, 14-18; 7:6, 12ख, 15, 22, 23. [7]आर. टी. फ्रांस ने लिखा है कि धन्यवचन ''असली चेला'' के व्यवहार को ''संसार का व्यक्ति'' के व्यवहार से अलग करता है (फ्रांस, 109)। [8]फ्रैंक आर. ए. कोक्स, *सरमन नोट्स ऑन द सरमन ऑन द माउंट* (नैशविल्ले: गॉस्पल एडवोकेट कं., 1955), 7. [9]यीशु के बहुत से अनुयायियों को ''चेले'' कहा जाता था, परन्तु उसके पीछे चलने के समर्पण और कारण के उनके अलग-अलग स्तर थे। ऊपर-ऊपर से उसकी शिष्यता में आने वाले थोड़ी देर बाद उसके पीछे चलना छोड़ गए (यूहन्ना 6:66-68)। [10]डग्लस आर. ए. हेयर, *मैथ्यू,* इंटरप्रिटेशन (लूईसविल्ले: जॉन नॉक्स प्रैस, 1993), 35.

[11]विलियम बार्कले, द *गॉस्पल ऑफ़ मैथ्यू,* अंक 1, 2रा संस्क., द डेली स्टडी बाइबल (फिलाडेल्फिया: वेस्टमिंस्टर प्रैस, 1958), 79. [12]भजन संहिता 14:4-6; 22:26; 34:6; 35:10; 37:14, 15; 40:17; 82:2, 3; 86:1, 2; 112:9; 113:7; 140:12, 13. [13]हैग्नर, 91. [14]विलियम बार्कले, *ए न्यू टैस्टामेंट वर्डबुक* (न्यू यार्क: हार्पर

एंड ब्रदर्स, तिथि नहीं), 104. [15]बार्कले, *मैथ्यू,* 93. [16]वही। [17]रॉबर्ट एच. माउंस, *मैथ्यू,* न्यू इंटरनैशनल बाइबल कमैंट्री (पीबॉडी, मैसाचुएट्स: हैंड्रिक्सन पब्लिशर्स, 1991), 39. [18]वही। [19]जेम्स मैकगिल ''ब्लैसड आर द मीक,'' *सप्रिचुअल सॉर्ड लेक्चर्स* (1982): 32. [20]हैग्नर, 93.

[21]मौरिस, 99. [22]जॉन मैकऑर्थर, जनि., *द मैकऑर्थर न्यू टैस्टामेंट कमैंट्री: मैथ्यू 1-7* (शिकागो: मूडी प्रैस, 1985), 178. [23]प्राचीन रोम में स्तोइकी लोग ''मर्दानगी'' या ''गुण'' पर ज़ोर देते थे। यह विचार यूनान में आरम्भ हुआ और दो यूनानी दर्शनिकों, पेयनेसियुश (185-110 ई.पू.) और पोसिडोनियुस (135-51 ई.पू.) द्वारा रोम में इसे प्रचारित किया गया। बाद के यूनानी लेखक डायोजीन्स ने आत्मा की व्याधियों में ''तरसवान,'' या ''दया'' भी डाल दिए। (डायोजीन्स लेयर सियुस *लाइवज़ ऑफ़ एमिनेटे फिलॉसफर्स* 7.115.) [24]टालमुड *शब्बथ* 151बी. [25]रॉबर्ट एच. गुंड्री, *मैथ्यू: ए कमैंट्री ऑन हिज़ लिटरेरी एंड थियोलॉजिकल आर्ट* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1982), 71. [26]मैकऑर्थर, 191. [27]हैड्डन डब्ल्यू. रॉबिनसन, *द क्रिश्चियन साल्ट एंड लाइट कंपनी* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: डिस्कवरी हाउस पब्लिशर्स, 1988), 65. [28]*जौंडरवन इलस्ट्रेटेड बाइबल बैक्ग्राउंड कमैंट्री,* अंक 1, *मैथ्यू, मार्क, लूक,* संपा. क्लिंटन ई. अरनोल्ड (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: जौंडरवन 2002), 35 में माइकल जे. बिल्किन्स, ''मैथ्यू।'' [29]लूईस, 83. [30]हेयर, 42.

[31]हैग्नर, 94. [32]बार्कले, *मैथ्यू,* 104. [33]मैदानी उपदेश के चारों धन्यवचन मध्यम पुरुष में हैं (लूका 6:20-23)। [34]हैग्नर, 94. [35]डी. मार्टिन लॉयड-जोन्स, *स्टडीज़ इन द सरमन ऑन द माउंट,* अंक 1 (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., तिथि नहीं), 32-39. [36]पैकट ओट ''एटिच्यूट्स फ्रॉम द बीटिच्यूट्स, *क्रिश्चिन वुमैन* (जनवरी/फरवरी 1986): 33. [37]देखें विलियम बायरन फारबेश, संपा. *फोक्स'स बुक ऑफ माटिर्स* (फिलाडेल्फिया: यूनिवर्सल बुक एंड बाइबल हाउस, 1926)। [38]रोबिनसन, 89.